BIHAR SHODH SAMAAGAM, VOL. 1, ISSUE 1, p.p 5-7
(2023)

# पूंजीवाद युग का एक अध्ययन

डॉ. राहुल मौर्या

**प्रस्तावना :–**

पूँजीवाद आधुनिक युग की अर्थ–व्यवस्था की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता रही है। सोलहवीं शताब्दी में अमेरिका महादेश तथा नये समुद्री मार्गों का पता लगाने के फलस्वरूप विश्व–व्यापी पैमाने पर यूरोपीय प्रसार का जो दौर प्रारंभ हुआ उससे यूरोप में पूँजीवाद के उद्भव तथा विकास को जबरदस्त अनुप्रेरणा मिली। पूँजीवाद की परिभाषा अनगिनत हैं। उनमें से अधिकांश सही जान पड़ेंगी लेकिन उपयोगी शायद दो एक ही हों। उदाहरणार्थ, हम यह कह सकते हैं कि पूँजीवाद वह अर्थव्यवस्था है जिसमें पूँजी का उपयोग होता है। एक अन्य परिभाषा के अनुसार इस अर्थव्यवस्था का उद्देश्य मुनाफा कमाना होता है। दोनों ही परिभाषाएँ सही तो हैं, किंतु दुनिया के हर भाग में तथा हर समय में (निश्चय ही बीसवीं सदी की सोवियत व्यवस्था एक अपवाद हो सकती है) जो भी अर्थव्यवस्था रही हो उसमें पूँजी का उपयोग होता रहा है तथा मुनाफा भी अर्जित किया जाता रहा है। फलतः उपर्युक्त परिभाषाएँ गहन अध्ययन के हेतु उतनी उपयोगी नहीं रह जाती। इसी प्रकार किसी समाज को पूँजीवाद केवल इसलिए कहना ठीक नहीं होगा कि उसके कुछ लोक सर्राफा (बैंक) का काम या मुद्रा की लेनदेन करते हैं। वाणिज्य तथा सूद सहित अथवा सूद रहित मुद्रा की लेनदेन मानव–सभ्यता के इतिहास के समान ही पुरानी है। इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषाओं से विभिन्न युगों में या यूरोपीय संगठनों अथवा व्यवस्थाओं के विभिन्न स्वरूप जो विकसित होते रहे हैं, अथवा यूरोपीय आर्थिक पद्धतियाँ गैर यूरोपीय देशों में विकसित आर्थिक पद्धतियों से किन बातों में भिन्न रही, इनको जाँचने–परखने अथवा समझने में सहायता नहीं मिलती।

**पूंजीवाद युग का एक अध्ययन :–**

हम जानते हैं, सामन्ती समाज मुख्यतः कृषि पर आधारित था। इस समाज में किसानों से उनके अधिशेष उत्पादन का अंश जबर्दस्ती लिया जाता था। यद्यपि सिक्के थे परंतु उनका प्रचलन सीमित था। किंतु बाद के काल में सिक्कों का प्रचलनबढ़ता गया। अब किसान भी बाजार के लिए उत्पादन करने लगा था। एक अन्य महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि किसानों तथा अन्य उत्पादकों अथवा स्वामियों के साथ उसके जो संबंध थे, वे सामाजिक प्रतिष्ठा या पद के अनुक्रम से नहीं बल्कि संविदाद्वारा निर्धारित होने लगे। फलतः वाणिज्य केन्द्रित व्यापारिक स्वरूप की झलक मिली। इसके अतिरिक्त समाज के एक बड़े वर्ग को अपनी श्रम–शक्ति बेचने के लिए बाध्य होना पड़ा। सामन्तकाल में धन की कमी नहीं थी। सामन्तों और अमीरों के पास सोना–चाँदी काफी मात्राा में मौजूद था। परंतु उनका यह धन अनुपयोगी था। पर जैसे–जैसे व्यापार और उद्योग की प्रगति होती गयी वैसे–वैसे स्थिति बदलती गयी। इसी परिवर्तन के क्रम में सामन्ती व्यवस्था पूँजीवादी व्यवस्था की ओर बढ़ती गई जिसमें धन का निवेश लाभ कमाने के लिए किया जाता है। इससे प्राप्त होने वाले लाभांशों को पुनः निवेशित करके और लाभ कमाया जाता है। इस प्रकार निवेशित किए जाने वाले धन को पूँजी कहा जाता है। पुराने तीनों वर्ग–पादरी, सामन्त तथा कृषक एवं कामगारों के अतिरिक्त परवर्ती काल में एक नए मध्यम वर्ग का उदय हुआ। इस वर्ग के उदय का कारण इस काल में व्यापार में तेजी से हुई प्रगति था। जल्द ही सम्पत्तिशाली होने के कारण इस वर्ग का तत्कालीन समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान हो गया, यद्यपि इस वर्ग के लोगों की संख्या कम थी।

पन्दरहवीं शताब्दी के अन्त में हुई खोजों ने व्यापार का स्वरूप ही बदल दिया। इन परिवर्तनों के साथ ही वस्तुओं की उत्पादन प्रणाली में भी परिवर्तन आया। मध्य युग के आरंभ में कृषक आमतौर पर अपनी आवश्यकताएँ स्थानीय स्तर पर निर्मित वस्तुओं से पूरा कर लेता था। जमींदारों एवं सम्पन्न वर्ग के लोगों की आवश्यकताओं की आपूर्ति विभिन्न शिल्पों में दक्ष कृषिदासों द्वारा होती थी। ये शिल्पी संघों या श्रेणियों में संगठित होते थे। प्रत्येक श्रेणी में दक्ष कारीगर अथवा उस्ताद, नौसिखिए और वेतनभोगी कारीगर अथवा मिस्त्री होते थे। किसी भी शिल्प को सीखने के लिए व्यक्ति को उस श्रेणी (शिल्प के) के उस्ताद का चेला बनना पड़ता था। कारीगर सीख लेने के बाद या तो उसी उस्ताद के अधीन मिस्त्री हो जाता था और पारिश्रमिक पर काम करता था अथवा उस शिल्प का अच्छा ज्ञान होने पर स्वयं उस्ताद बन जाता था। परन्तु व्यापार में प्रगति के साथ वस्तुओं की माँग बढ़ गई जिसे अब श्रेणी प्रणाली द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता था। अतः धीरे–धीरे श्रेणी प्रणाली लुप्त होती गयी और उसका स्थान पूँजीवादी उत्पादन व्यवस्था ने ले लिया। हम जानते हैं कि श्रेणी प्रणाली के अन्तर्गत एक ही श्रेणी की इकाइयों के बीच अथवा एक ही इकाई के सदस्यों के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रहता था तथा प्रतिस्पर्धा करने वालों को श्रेणी कार्य करने की अनुमति नहीं देती थी। प्रतिस्पर्धा के अभाव में कीमतें भी स्थिर रहती थी। किन्तु पूँजीवादी उत्पादन व्यवस्था में ऐसा नहीं रहा। इस नई अर्थव्यवस्था में असमानताओं एवं प्रतिस्पर्धा का प्रवेश हो गया।

प्रारम्भिक अथवा वाणिकी पूँजीवाद का विकास उन देशों में पहले शुरू हुआ जो प्रशासनिक दृष्टि से अपेक्षाकृत उदार थे। निरंकुश राज्यों से संबंधित छानबीन से यह स्पष्ट हो गया है कि राज्य जितना अधिक निरंकुश हुआ, उतना ही प्रभावशाली

वर्गों के हितों का रक्षक बना। जिन देशों ने पूँजीवाद के विकास में नेतृत्व प्रदान किया, वहाँ या तो निरंकुश राजतंत्रा का विकास ही नहीं हुआ, जैसे, नीदरलैंड में; अथवा वहाँ के राजतंत्रा का स्वरूप ऐसा था कि वहाँ यूरोप के अन्य भागों के समान कठोर नौकरशाही एवं सैनिकतंत्रा का विकास नहीं हुआ जैसे, इंग्लैण्ड में। इंग्लैण्ड में कृषि के क्षेत्रा में पूँजीवादी संबंधों का आरंभ 16वीं शताब्दी से हुआ। मठों का विनाश तथा वाणिज्योन्मुख नवीन अभिजात वर्ग के आविर्भाव से इन संबंधों को और दृढ़ता मिली। नीदरलैंड में पूँजीवादी कृषि, पट्टेधारी व्यवस्था का परिणाम थी। यहाँ संयुक्त प्रांतों द्वारा स्वतंत्राता प्राप्त कर लेने पर सामंतीअधिकारों को समाप्त कर दिया गया और छोटी–छोटी जमीनों की संख्या बढ़ गई। इनमें से अधिकांश जमीनें धनाढ्य बुर्जुआ वर्ग के हाथों में आ गयी। वे इन जमीनों को अल्पकालीन पट्टों पर देते थे और इस बात पर भी जोर देते थे कि उनमें खेती करते समय उत्पादन के आधुनिकतम तरीकों का इस्तेमाल किया जाए।

सोलहवीं शताब्दी के दौरान हम इंग्लैण्ड में पूँजीवादी बुर्जुआ वर्ग (व्यवसायी, व्यापारी तथा नागरिक कर्मचारी) का उदय पाते हैं। भूमि की बाड़ेबन्दी की प्रथा ने चर्च की सम्पत्ति के अधिग्रहण के साथ मिलकर विशाल जमीन–जायदादों में वृद्धि की तथा भूपतियों और किसानों के बीच के संबंधों को ही बदल दिया। ब्रिटेन में ग्रामीण समाज जैसे–जैसे तीन स्तरों–जमींदार, लगान अदा करने वाले किसान तथा भूमिहीन कृषक मजदूर में बंटता गया, वैसे–वैसे छोटे किसान खत्म होते गये। किंतु छोटे किसानों के लोप के लिए सिर्फ उनके खेतों की जमींदारों के द्वारा बेदखली को ही जिम्मेदार ठहराना अनुचित होगा। जायदादों के विक्रय ने भी देहाती इंग्लैण्ड में कृषि संबंधी और सामाजिक ढांचे के बदलाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। धीरे–धीरे भूमि की बेदखली से एक–तिहाई कृषक वर्ग का लोप हो गया। इस संदर्भ में भूमि की खरीद का भी ध्यान रखना चाहिए। मूल्यों में वृद्धि, बाजार की स्थिति आदि कारणों से कुछ वर्ग के लोग भूमि खरीदने की अपेक्षा बेचने को विवश हुए। फलतः भूमि के अच्छे–खासे हिस्से को प्राप्त करने वाले कुछ किसानों को अस्तित्व के कारण उच्च वर्ग की संख्या में वृद्धि हुई। कुल मिलाकर इंग्लैण्ड में पूँजीवाद के उदय में नगरों में मंडियों के विकास, अन्तःक्षेत्रीय और विदेशी व्यापार, मौद्रिक अर्थव्यवस्था का उदय, ऊन उद्योग का विस्तार, विस्तृत घरेलू बाजार का विकास आदि के साथ–साथ विकसित एवं गतिशील देहाती समाज ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई।

आधुनिक पूँजीवाद मूलतः विभिन्न खनिज एवं कृषि उद्योगों पर आधारित है। जिस समय पूँजीवाद व्यवस्था का जन्म हुआ, संभवतः उस समय इसके जन्म का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण लोहे का अधिक उत्पादन था। ऐसा इसलिए कि लोहा, कृषि और उद्योग दोनों के लिए सबसे आवश्यक धातु है। अन्य दूसरे खनिज जैसे सोना, चाँदी, तांबा, जस्ता, टीन आदि का भी उत्पादन बढ़ने लगा और उनकी खुदाई की विधियों में महत्त्वपूर्ण सुधार हुए। अमेरिका की खानों से प्रचुर मात्राा में सोना और चाँदी यूरोप में आया। अधिक मात्राा में इन धातुओं के संग्रह ने सिक्कों के प्रयोग को बढ़ा दिया, जिससे अधिक धन जमा करना आसान हो गया। विनिमय के स्थान पर सिक्कों के प्रयोग को बढ़ावा मिला। इससे अधिक धन जमा करना आसान हो गया। इस धन ने औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित किया। औद्योगिक विकास के लिए अन्य आवश्यक साधनों का होना भी जरूरी होता है केवल धन का नहीं। यही कारण है कि 16वीं शताब्दी में अत्यन्त समृद्ध होने के बावजूद उद्योग के क्षेत्रा में स्पेन का विशेष विकास नहीं हुआ। पूँजीवाद के उदय का एक अन्य महत्त्वपूर्ण कारण जल परिवहन में सुधार एवं नए देशों की खोज भी था। कम्पास, पाल और इसी तरह के दूसरे यंत्राों की सहायता से अब नाविकों को दूर–दूर तक सुरक्षित यात्राा करना आसान हो गया। 15वीं एवं 16वीं शताब्दियों में यूरोप के नाविकों ने अनेक नए महादेश, देश तथा एशिया के लिए नए समुद्री मार्ग को खोज निकाला।

15वीं–16वीं शताब्दियों में व्यवसाय का परिमाण बढ़ जाने के कारण व्यवसाय पद्धतियों में सुधार आवश्यक था। अतः अधिक संख्या में अच्छे बैंक खोले गए। उन दिनों लेन–देन का अधिकांश भाग न तो सिक्कों द्वारा और न ही कागजी मुद्रा द्वारा
बल्कि बैंको के कारण संभव हुआ। यद्यपि बैंकिंग–प्रणाली का जन्म मध्यकाल में ही हो गया था, किंतु पूँजी–तंत्रा में बैंक एक बड़ा व्यवसाय बन गया। 15वीं शताब्दी में फ्लोरेंस के मेडिस परिवार ने पहली महान बैंकिंग–प्रणाली की स्थापना की। शीघ्र ही यूरोप के मुख्य व्यावसायिक केन्द्रों में इस बैंक की शाखाएँ खुल गई। 16वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड, हालैंड, स्पेन, आस्ट्रेलिया तथा स्वीडेन में भी बैंकिंग संस्थाएँ स्थापित हो गयी। बैंक अपने पास जमा धन को उन व्यवसायियों को उधार देकर जिन्हें धन की आवश्यकता थी, पूँजीवाद को आगे बढ़ाने में काफी सहायक सिद्ध हुई है। इसके अलावा बैंकों के अधिक व्यापक और विकसित हो जाने के कारण बैंकों ने विदेशों में व्यापारियों के बिलों का भुगतान अच्छे और सुविधाजनक तरीके से करने में सहायता प्रदान की इस तरह संगठित एवं विकसित बैंकिंग–प्रणाली ने पूँजीवाद के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। बैंक की तरह बीमा–प्रणाली ने भी पूँजीवादी व्यवस्था को आगे बढ़ाने में सहयोग दिया। जोखिम को कम करके बीमा–प्रणाली ने प्रारंभिक पूँजीतंत्रा का पोषण किया। पहले यदि किसी व्यवसायी का कोई बड़ा जहाज जिन पर माल लदे होते थे, मार्ग में नष्ट हो जाता था तो इससे उसे भारी क्षति होती थी। किंतु बीमा–योजना के बाद ऐसा होने पर बीमा कम्पनी उसकी क्षतिपूर्ति करती थी। बीमा कराने वाला व्यवसायी बीमा कम्पनी को एक निश्चित राशि प्रीमियम के रूप में देता था। सुरक्षा की इस व्यवस्था ने भी पूँजीवाद को आगे बढ़ाया।

**निष्कर्षः–**

पूँजीवादी व्यवस्था के समाजवादी प्रभाव भी उल्लेखनीय हैं। इसके फलस्वरूप समाज की संरचना में परिवर्तन आने लगे। इसने समाज में दो नए वर्गों को जन्म दिया–पूँजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग पूँजीपति वर्ग का उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व था। सर्वहारा वर्ग के पास साधन नहीं थे। इसलिए उसे अपनी श्रम–शक्ति को बेचना पड़ता था। कालान्तर में

समाजवाद और साम्यवाद ने सर्वहारा वर्ग की सुरक्षा के लिए पूँजीवाद को कड़ी चुनौती दी।

**संदर्भ सूची :–**

डा. बी. के. श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारत का इतिहास
राजीव अहीर, आधुनिक भारत का इतिहास
डॉ. ऐ. के. मित्तल, आधुनिक भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास
कुमार नलिन, विश्व का इतिहास
जैन, माथुर, आधुनिक विश्व इतिहास
दीनानाथ वर्मा, शिव कुमार सिंह, विश्व का इतिहास का सर्वेक्षण

**डॉ. राहुल मौर्या**
**मोनार्ड विश्वविद्यालय, हापुर**